2 जीवन में आया बदलाव

(सन् 650 ई. से 1200 ई. तक भारत में जन–जीवन)

KY76FD

पिछले पाठ में आपने पढ़ा कि सन् 650 ई. के बाद राजा और राज्यों की स्थिति में अनेक बदलाव आए, जैसे बड़े साम्राज्यों के स्थान पर छोटे–छोटे राज्यों का विकास हुआ आदि।

इस काल में हमें समाज, अर्थव्यवस्था और धर्म में भी परिवर्तन दिखाई देते है। आइए देखें कि ये बदलाव किस तरह हुए।

जंगल और गाँव के निवासी

उन दिनों आज की तुलना में अधिक जंगल थे, गाँव व शहर भी थे किंतु गाँव और शहर आज की तुलना में कम और छोटे थे।

ouk e: jguokyk ykx– पुराने समय की तरह उन दिनों जंगलों में भी काफी लोग रहते थे। पुराने समय के लोगों की तरह ये लोग भी जंगलों से कंद–मूल, फल आदि इकट्ठा करते तथा जानवरों का शिकार कर गुजारा करते थे। लेकिन उनके जीवन में भी काफी बदलाव आया था। ये लोग जंगल के पेड़ों को काटकर थोड़ी–सी–खेती भी कर लेते थे। वे खेतों में न हल चलाते थे और न सिंचाई करते थे, सिर्फ बीज बिखेरकर रखवाली करते थे। जब फसल पक जाती तो उसे काट लेते थे। वे छोटी–छोटी बस्तियाँ बनाकर रहते थे, जिन्हें **पल्ली** कहा जाता था। वे जंगलों से तरह–तरह की चीजें इकट्ठी करते थे और इनके बदले गाँव या शहरों में अनाज, तेल, लोहा, नमक, आदि प्राप्त करते थे। वे राजाओं को भेंट भी देते थे।

इस प्रकार का जीवन जीनेवाले बहुत–से समूहों के बारे मे हमें उस काल की पुस्तकों से पता चलता है– जैसे– शबर, निषाद, पुलिंद, भील आदि।

आदिमानव के जीवन और शबर व भीलों के जीवन में क्या समानताएँ व असमानताएँ थीं?

घुमक्कड़ लोग– उन दिनों बहुत–से ऐसे लोग थे जो लगातार एक जगह से दूसरी जगह घूमते रहते थे। इनमें पशु चरानेवाले कई समूह थे। इनके जीवन में भी अब बदलाव आ रहा था। इन समूहों के कई लोग अब घुमक्कड़ जीवन छोड़कर गाँवों में बसकर खेती करने लगे थे। कुछ घुमक्कड़ समूह के लोग अच्छे कारीगर थे जो लोहे की चीजें बनाते थे या दूर के इलाकों में जाकर तालाब खोदने या साफ करने का काम करते थे। नाचने, गानेवाले नट भी आमतौर पर घूमते रहते थे तथा लोगों का मनोरंजन करते थे। इनके अलावा जोगी, सन्यासी, भिक्षुक जैसे लोग भी घर–द्वार छोड़कर घुमक्कड़ जीवन बिताते थे। गाँव व शहर के लोग इनका आदर, सत्कार करते थे।

आज आपके आसपास किस–किस तरह के घुमक्कड़ लोग रहते हैं ? वे समाज की सेवा कैसे करते हैं? कक्षा में चर्चा कीजिए।

गाँव–शहर के लोग

इन दिनों गाँवों में खेती करनेवाले लोगों की संख्या तेजी से बढ़ रही थी। जहाँ पहले खेती नहीं हो सकती थी ऐसी जगहों पर भी सिंचाई की व्यवस्था करके लोगों ने खेती करना शुरु कर दिया। यहाँ तक कि राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्रों के आस–पास और हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों पर भी खेती होने लगी थी। छत्तीसगढ़ के इतिहास से पता चलता है कि 11वीं शताब्दी में रतनपुर में 1400 तालाब बनवाए गए थे। इनकी संख्या अब घटकर 250 के लगभग रह गई है।

आपने अपने गाँव या शहर के तालाबों को तो देखा ही होगा। पता करें कि वे कितने साल पुराने हैं? तालाब क्यों कम हुए। आपस में चर्चा कीजिए।

गाँवों की विशेषता यह थी कि इनमें कई जाति के लोग रहते थे। गाँव का समाज बहुत हद तक जाति व्यवस्था से बँधा था। हर जाति की अपनी अलग बस्ती होती थी। इनमें चाण्डाल, सोपाक, सूत, मागध आदि अनेक जातियाँ थीं जिन्हें गाँव या शहर की सीमाओं के अंदर रहने का अधिकार नहीं था। वे जानवरों का शिकार करना, उनके खाल निकालना, चमड़े की चीजें बनाना, लकड़ी काटना, श्मशान में काम करना जैसे काम करते थे।

गाँव के प्रमुख कृषक परिवार के मुखिया मिलकर गाँव के लोगों की समस्याओं को सुलझाने एवं सामूहिक कार्य आदि करवाते थे। इन्हें कहीं–कहीं **"पंचकुल", "महत्तर"** आदि भी कहा जाता था।

उत्तर भारत के गाँवों में आमतौर पर किसी–न–किसी भोगपति का अधिकार होता था। ये राजा के अधिकारी तो होते ही थे, उसके रिश्तेदार (राजपुत्र या राजपूत) भी होते थे। इनका गाँववासियों पर बड़ा प्रभाव होता था। वे किसानों से लगान वसूल करते थे। लोगों के परिवारों में होनेवाले शादी–ब्याह या तीज–त्यौहारों तथा तालाबों और कुओं पर भी तरह तरह के कर वसूलते थे। इन सबके अतिरिक्त गाँव वालों को बेगार (बिना वेतन काम) भी करना पड़ता था।

इस समय सबसे बड़ा परिवर्तन आर्थिक क्षेत्र में हुआ। यह था लगान वसूली के तरीके का बदलना। गुप्त काल में लगान पर राजा का अधिकार होता था लेकिन अब स्थिति बदल गई थी। इस समय तक राजाओं द्वारा ब्राह्मणों और विद्वानों को भूमि दान में देने की परम्परा व्यापक हो चुकी थी। भू–क्षेत्रों से प्राप्त आय के बड़े भाग पर उसके स्वामी का अधिकार होता था और एक छोटा हिस्सा ही राजा को मिल पाता था। भू–पति इतने संपन्न हो गए थे कि वे स्वतंत्र शासकों की तरह व्यवहार करने लगे थे। वे अपनी सेना भी रखने लगे थे। पहले लगान राजा के नाम से वसूल किया जाता था। अब लगान सामंतों और भू–पतियों के नाम से वसूला जाने लगा। इसी कारण अब राजा और किसानों के बीच कोई सीधा संबंध भी नहीं रह गया था।

इसके विपरीत दक्षिण भारत में गाँवों के प्रमुख लोग ही मिलकर गाँव का सारा काम–काज चलाते थे। इनकी सभाएँ होती थीं जिन्हें **उर** कहा जाता था। कई गाँव की सभाएँ मिलकर एक **नाडू** बनाते थे। नाडू व उर ही लगान इकट्ठा करना, लोगों को दंडित करना, झगड़े निपटाना, तालाब व मंदिरों की देख–रेख करना, आदि करते थे।

उन दिनों समूचे भारत के गाँवों में ब्राह्मणों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। उन्हें जगह–जगह गाँव के गाँव दान में दिये जाते थे ताकि वे वहाँ बस जाएँ, पूजा–पाठ करें व लोगों को शिक्षा दें। ऐसे गाँवों को **ब्रह्मदेय** कहा जाता था।

उत्तर भारत व दक्षिण भारत के गाँवों की प्रशासन व्यवस्था में क्या अंतर था?

महिलाओं पर पाबंदियाँ

इस काल में महिलाओं पर तरह–तरह की पाबंदियाँ लगने लगीं थीं। अपनी मर्जी से पढ़ना, शादी करना, यात्रा करना, व्यवसाय करना, लोगों से मिलना–जुलना, ये सब अब अच्छा नहीं समझा जाने लगा था। इन्ही दिनों छोटी उम्र में शादी करवाना (बाल विवाह), पति के मरने पर पत्नी को भी उसकी चिता में जिंदा जलाना (सती प्रथा), पति के मरने पर दूसरे आदमी से शादी पर रोक, आदि बातें फैल रहीं थीं। इस कारण महिलाओं को समाज में अपनी पहचान बनाने के मौके नहीं मिले। ये बातें केवल उच्च जाति के लोगों तक ही सीमित नहीं रहीं। कई साधारण जाति के लोग भी इन बातों का अनुकरण करने लगे। आगे जाकर हम देखेंगे कि महिलाओं ने इन बातों का विरोध किस प्रकार किया?

छत्तीसगढ़ के रतनपुर में महामाया मंदिर के समीप में बड़ी संख्या में सती चौरे मिलते हैं। इनसे इस क्षेत्र में सती प्रथा के प्रचलित होने की जानकारी मिलती है। प्रत्येक वर्ष माघ–पूर्णिमा को यहाँ मेला लगता है, इसे आठाबीसा का मेला कहते हैं। वर्तमान समय में बाल–विवाह और सती–प्रथा कानूनन अपराध है।

1. मध्यकाल की महिलाओं को किन–किन बातों की मनाही थी जो आज की महिलाओं को नहीं है?
2. आपके अनुसार महिलाओं को कौन–कौन–से अधिकार मिलना चाहिए ?
3. पुरुषों पर इस तरह की पाबंदी क्यों नही लगाई जाती है?

शहर व व्यापार

हमने देखा कि इस काल में खेती करनेवाले बढ़ रहे थे, जिससे खेतों का विस्तार हो रहा था और छोटे–बड़े गाँव बस रहे थे। इन गाँवों के बीच आमतौर पर कुछ छोटे शहर विकसित हुए। ये **मंडपिक** या मंडी होते थे, जहाँ दूर– दूर से व्यापारी सामान खरीदने व बेचने आते थे। इनमें स्थाई दुकानें या **वीथियाँ** भी होती थीं जिनमें कई तरह के कारीगर (जैसे बुनकर, कुम्हार, पत्थर तराशनेवाले, बढ़ई, सोनार आदि) रहते थे। अक्सर ऐसे शहरों में राजा या सामंत भी रहते थे जो बाजार से कर वसूलते थे। शहर के व्यापारी, कारीगर या राजा भव्य मंदिर बनवाते थे और उनमें पूजा करने व त्यौहार मनाने के लिए दान भी देते थे।

दक्षिण भारत की आर्थिक उन्नति में मंदिरों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण थी। राजाओं और सामंतों द्वारा अपने वंश की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए विशाल अलंकृत मंदिरों का निर्माण किया गया। इन मंदिरों को बड़े–बड़े गाँवों के राजस्व प्राप्त होते थे। धीरे–धीरे इन मंदिरों की संपत्ति बढ़ती गई। मंदिरों की व्यवस्था करनेवाली समितियों ने यह धन व्यापार, व्यवसाय और उद्योगों में लगाया।

इतना ही नहीं मंदिरों द्वारा बड़े पैमाने पर ब्याज पर ऋण भी दिया जाने लगा। विशाल मंदिरों के निर्माण से बड़ी संख्या में मजदूर, कारीगर, व्यापारी, व्यवसायी और ब्राह्मण एक जगह एकत्रित होने लगे जिससे बड़ी संख्या में नए शहर बसे।

उन दिनों व्यापारी न केवल भारत के विभिन्न शहरों में जाकर व्यापार करते थे, बल्कि दूर–दूर के देशों में भी जाते थे। उन देशों के व्यापारी भी भारत आते थे। भारत के समुद्र तटों से, खासकर गुजरात, कोंकण, केरल व तमिलनाडु के बंदरगाहों से दूर–दूर तक समुद्री व्यापार होता था। दक्षिण भारत के व्यापारी नानादेसी, मणिग्रामम् नाम के श्रेणी या समूह बनाकर आपसी हितों की रक्षा करते थे। वे चीन, दक्षिण पूर्व एशिया, अरब देश, ईरान और अफ्रीका जाकर व्यापार करते थे। उसी तरह अरब, मध्य एशिया, चीन आदि देशों के व्यापारी भारत आते थे। ये विदेशी व्यापारी भारत के तटीय प्रदेशों में बसने भी लगे थे। इस तरह यहाँ के लोग दूर–दराज के लोगों की संस्कृतियों व धर्मों के संपर्क में आए और उनसे प्रभावित हुए। केरल व तमिलनाडु में चीनी, इसाई व यहूदी आकर बसे, गुजरात व केरल में अरब व्यापारी। ये भारत से मसाले, कपड़े, चावल आदि खरीदकर अपने देशों को भेजते थे।

अगर आप उन दिनों के शहरों में घूमने जाते तो क्या आपको अपने पास के शहर जैसे दृश्य दिखते? किन बातों में वे शहर आज के शहरों से भिन्न होते? चर्चा करें।

भक्ति आंदोलन, मंदिर व क्षेत्रीय भाषा

KYG2H1

आमतौर पर जंगलों में रहनेवाले लोग अपनी परंपराओं के अनुसार देवी–देवताओं की पूजा करते थे। छत्तीसगढ़ में भी बूढ़ादेव और मातादेवालयों के प्राचीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। गाँवों में बहुतायत से पूजा किए जानेवाले "ठाकुर देव" का पूजा–स्थल (ठाकुर चौरा) भी बड़ी संख्या में मिलते हैं।

इस काल में बौद्ध धर्म का प्रभाव कम होने लगा था। मध्य काल में भारतीय आध्यात्म में एक नई लहर चली जिसे हम भक्ति आंदोलन कहते हैं। सबसे पहले दक्षिण भारत में यह आंदोलन तमिलनाडु में शुरू हुआ था। वहाँ शिव और विष्णु के कई संत भक्त हुए। ये लोग सभी जातियों के थे। वे कर्मकांडों व कई देवी–देवताओं की उपासना की जगह शिव या विष्णु के प्रति प्रेम और भक्ति को बढ़ावा देना चाहते थे। उन्होंने आम लोगों की भाषा तमिल में सुंदर और प्रेम, श्रध्दा पूर्ण भक्ति गीत रचे जो काफी लोकप्रिय हुए। शिव के भक्तों को **नयनार** और विष्णु के भक्तों को **अलवार** कहा जाता था। वे

चित्र–2.1 सूर्य मंदिर, कोणार्क (ओडिशा)

राम और कृष्ण को भी विष्णु के अवतार के रूप में पूजते थे। भक्ति आंदोलन के प्रभाव से जगह–जगह मंदिर बने। राजाओं ने अपने प्रभाव और वैभव को दर्शाने के लिए उन मंदिरों को और भी भव्य बनाया।

चित्र–2.2 भोरम देव का मंदिर, कबीरधाम

कई भक्त मंदिरों के इस बदलते स्वरूप से खुश नहीं थे। उनका मानना था कि ईश्वर से प्रेम बिना किसी आडंबर के करना चाहिए। ऐसे भक्तों में प्रमुख थे कर्नाटक के लिंगायत या वीर शैव। बसवण्णा व अक्कमहादेवी इस आंदोलन के प्रमुख प्रेरक थे। वे जात–पाँत, ऊँच–नीच के भेदभाव को भी मिटाना चाहते थे। इसी तरह के आंदोलन बंगाल और बिहार में नाथपंथी व सिद्धों ने भी शुरू किए। भक्त संतों ने अपने गीत आम लोगों की बोली में रचे। इनके प्रभाव से कई स्थानीय भाषाओं और साहित्य का विकास हुआ। इस काल में दक्षिण में तमिल, तेलगू व कन्नड़ तथा उत्तर में गुजराती व हिन्दी के प्रारंभिक स्वरूप में रची गई रचनाएँ काफी संख्या में हमें मिलती हैं।

भक्त संतों ने आम लोगों की भाषा को ही क्यों अपनाया होगा?

मंदिर और शिल्पकला

इस काल में बननेवाले मंदिर काफी बड़े होते थे। उनमें गर्भगृह, शिखर तथा कई छोटे बड़े मंडप होते थे। दूर से ही मंदिरों के शिखर दिखते थे जो गर्भगृह पर बनाये जाते थे। गर्भगृह उस कमरे को कहा जाता है जिसमें देवी–देवताओं की मूर्तियों की स्थापना की जाती है। इन मंदिरों में प्रवेश करने पर सबसे पहले मुख्य मंडप आता है जिसके बाद अर्द्ध मंडप, महा मंडप, आदि होते हैं। ये मंडप वास्तव में बड़े कमरे होते हैं जिनमें खड़े होकर भक्त देवता के दर्शन करते हैं। इन मंदिरों का सबसे आकर्षक हिस्सा शिखर होता है। यह मुख्य रूप से दो प्रकार से बनाया जाता था। दक्षिण भारतीय (चित्र 1.4) एवं उत्तर भारतीय शैली (चित्र 2.2) से इनके उदाहरण आप देख सकते हैं।

चित्र–2.3 गंडई पंडरिया का मंदिर

ओडिशा का प्रसिद्ध सूर्य मंदिर(कोणार्क), चंदेल राजाओं द्वारा बनवाए गए खजुराहो के मंदिर, राजराज चोल द्वारा बनवाए राजराजेश्वर मंदिर आदि इस काल के मंदिर निर्माण कला के सुंदर नमूने हैं। छत्तीसगढ़ में कल्चुरी शासकों द्वारा बनवाया गया रतनपुर का मंदिर, गंडई पंडरिया का मंदिर, जाजल्लदेव द्वारा निर्मित शिवरीनारायण का मंदिर तथा गोपाल देव द्वारा निर्मित कबीरधाम (कवर्धा) जिले का भोरमदेव मंदिर इसी काल के निर्माण कला को दर्शाते हैं। पत्थरों में तराशी गई देवी देवताओं की विशालकाय मूर्तियाँ इन मंदिरों की मुख्य विशेषता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. उचित संबंध जोड़िए –

1. ब्रह्मदेय – अलवार
2. पंचकुल – गाँव के प्रमुख कृषक परिवार के मुखिया
3. शिव भक्त – ब्राह्मणों को गाँव दान में देना।
4. विष्णु भक्त – नयनार

2. सही या गलत बताइए–

1. भोरमदेव का मंदिर राजनाँदगाँव जिले में है।
2. दक्षिण भारत के व्यापारी समूह बनाकर व्यापार करते थे।
3. बसवण्णा और अक्कमहादेवी एक कुशल राजनीतिज्ञ थे।
4. भक्त संतों ने कर्मकांडों और देवी–देवताओं पर विश्वास किया।
5. गंडई पंडरिया का मंदिर चोल शासकों द्वारा बनवाया गया था।

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. पल्ली किसे कहते थे ?
2. चंदेल राजाओं द्वारा किस मंदिर का निर्माण किया गया था ?
3. छत्तीसगढ़ में सती प्रथा के अवशेष कहाँ पर दिखाई देते हैं ?
4. सन् 650 ई. के बाद राज्यों की स्थिति में प्रमुख रूप से क्या बदलाव आए ?
5. उर किसे कहते थे ?
6. दक्षिण भारत की उन्नति में मंदिरों की क्या भूमिका थी ?
7. भक्त संतों के कारण स्थानीय भाषा का विकास किस प्रकार हुआ ?
8. 650 ई. से 1200 ई. में आर्थिक क्षेत्र में क्या–क्या परिवर्तन हुए ?

योग्यता विस्तार–

आप अपनी कक्षा के कुछ साथियों के साथ आस–पास के प्राचीन मंदिरों को देखने जाएँ और वहाँ के पुजारी एवं आसपास के लोगों से निम्नलिखित जानकारियाँ एकत्र करें –

1. मंदिरों के नाम एवं चित्र।
2. निर्माणकर्ता का नाम एवं अवधि।
3. मंदिर में स्थापित देवी–देवताओं के नाम।
4. मंदिर से संबंधित कोई कहानी या किंवदंतियाँ।